IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आर्ष ग्रंथों में मातृत्व की अवधारणा: एक विवेचनात्मक अध्ययन

सौरभ श्रीवास्तव (शोधार्थी - प्राच्य अध्ययन, धर्म अध्ययन एवं दर्शनशास्त्र विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार), डॉ. कृष्णा झरे (सह प्राध्यापक, प्राच्य अध्ययन, धर्म अध्ययन एवं दर्शनशास्त्र विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

शोध सारांश -

वर्तमान युग में अपराध, भ्रष्टाचार, हिंसा, युद्ध, पारिवारिक बिखराव और सामाजिक असंतोष जैसी समस्याएँ निरंतर बढ़ रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति मूल्य-संकट, आस्था-संकट और मानसिक अस्थिरता का सामना कर रहा है। इन परिस्थितियों का मूल कारण मानवीय संवेदनाओं में कमी है, जबकि मातृत्व इन्हीं भाव-संवेदनाओं की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। भारतीय संस्कृति में मातृत्व को परम पावन, करुणा एवं सृजनशीलता का प्रतीक माना गया है।
आर्षग्रंथ जिनमें वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत और पुराण, मातृत्व को केवल जैविक प्रक्रिया तक सीमित नहीं रखते, बल्कि उसे आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों से जोड़ते हैं। वेद माता को देवतुल्य स्थान प्रदान करते हैं, उपनिषद उसे प्रथम गुरु के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं, महाकाव्यों की मातृ-पात्राएँ त्याग और संघर्ष का आदर्श प्रस्तुत करती हैं, तथा पुराणों में मातृत्व को आदिशक्ति के रूप में सृष्टि और धर्म की आधारशिला बताया गया है।

यह शोध पत्र विवेचनात्मक पद्धति पर आधारित है और इसमें आर्षग्रंथों के साथ-साथ द्वितीयक स्रोतों का भी अध्ययन किया जाएगा। इस प्रकार आर्षग्रंथों में मातृत्व की अवधारणा केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति का मार्गदर्शन भी करती है। यदि समाज में मातृत्व की गरिमा और संवेदना को पुनःस्थापित किया जाए, तो आज के आस्था-संकट और सामाजिक विघटन की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

मुख्य शब्द: मातृत्व, आस्था-संकट, भारतीय संस्कृति, आर्षग्रंथ, संवेदना।

1. प्रस्तावना

मातृत्व मानव सभ्यता के आरंभ से ही समाज और संस्कृति का एक केंद्रीय आधार रहा है। व्यक्ति और समाज की उन्नति में अनेक घटकों का योगदान होता है। शिक्षाशास्त्री, समाजशास्त्री और अर्थशास्त्री सुख-सुविधाओं के संवर्द्धन तथा सामाजिक व्यवस्था और शालीनता बनाए रखने का प्रयास करते हैं। भौतिक विकास के लिए यह सब आवश्यक है, किंतु व्यक्ति और समाज में उदारता, करुणा, शालीनता और सदाशयता का संचार मातृशक्ति द्वारा ही संभव होता है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति में मातृत्व को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है (शर्मा, 1998, पृ. 2.22)।

देवी-देवताओं में माँ को परम सत्ता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। विभिन्न देवियों की प्रतिष्ठा, पूजा और आराधना के पीछे मातृशक्ति के प्रति गहन श्रद्धा और सम्मान का दर्शन निहित है। जिस समाज में मातृसत्ता के प्रति यह भाव जितना गहरा होगा, वह समाज उतना ही श्रेष्ठ और शालीन माना जाएगा। ऋषियों ने सर्वांगीण प्रगति के लिए सर्वप्रथम माँ के प्रति निष्ठा विकसित करने की शिक्षा दी है। भारतीय परंपरा में कहा गया है, मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद अर्थात् माता, पिता और आचार्य ही मानव जीवन को दिशा देते हैं, जिनमें सबसे पहला और सर्वोपरि स्थान माँ का है (शर्मा, 1998, पृ. 2.22)।

माँ इस सांसारिक जीवन को जन्म देने वाली तो है ही, साथ ही वह परम सत्ता का स्वरूप भी मानी गई है। लौकिक दृष्टि से माता और पिता भिन्न प्रतीत होते हैं, किंतु आध्यात्मिक दृष्टि से वे एक ही सत्ता के दो रूप हैं। 'मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव' जैसे वैदिक मंत्रों में माता को प्रथम स्थान दिया गया है, क्योंकि वही आदि गुरु है और उसकी कृपा पर ही संतानों का सांसारिक एवं आध्यात्मिक कल्याण निर्भर करता है (शर्मा, 1998, पृ. 2.29)।

वर्तमान समय में अनैतिकता, आस्था-संकट, अपराध, भ्रष्टाचार, हिंसा, युद्ध, पारिवारिक विघटन और सामाजिक असंतोष जैसी समस्याएँ मातृत्व की उपेक्षा का परिणाम प्रतीत होती हैं। ऐसे में यह प्रश्न उठता है कि क्या हम अपने प्राचीन आर्षग्रंथों में वर्णित मातृत्व की उस गहन और आध्यात्मिक समझ से विमुख हो गए हैं? मातृत्व का वह स्वरूप, जो मातृशक्ति की असीम ऊर्जा और सृजनशीलता से जुड़ा हुआ है, आज के बदलते परिप्रेक्ष्य में कितना प्रासंगिक है, यही इस शोध का केंद्रीय प्रश्न है।

इस शोध पत्र का उद्देश्य आर्षग्रंथों में प्रतिपादित मातृत्व की अवधारणा का विवेचनात्मक अध्ययन करना है। वेद, उपनिषद, स्मृति ग्रंथ, पुराण, रामायण और महाभारत जैसे ग्रंथों में वर्णित मातृत्व के विविध स्वरूपों और अर्थों का विश्लेषण किया जाएगा।

2. मातृत्व

मातृत्व संसार की एक अनोखी घटना है, जहाँ एक माँ अपनी संतान के लिए सब कुछ त्याग देती है, जिसे सामान्य बुद्धि से समझ पाना असंभव है । माँ और संतान के बीच की यह अति- संवेदनशीलता का कारण यह है कि माँ अपनी परवाह किए बिना अपनी संतान के हित का चिंतन करती रहती है । सच्चा मातृत्व सहज रूप से बच्चे पैदा करना नहीं है, बल्कि सत्ता के सचेतन निर्माण से शुरू होता है, जहाँ नए शरीर में आने वाली आत्मा के लिए सत्ता को तैयार किया जाता है, इस प्रकार नारी का सच्चा क्षेत्र आध्यात्मिक है (रवीन्द्र(2003)) । मातृत्व की स्थापना का अर्थ उन सद्गुणों, तत्वों और मनोदशाओं का समाज एवं व्यक्ति में प्रचार, प्रसार और विकास करना है जो नारी जाति, विशेषकर उसके मातृत्व के विशिष्ट गुण हैं

(ब्रह्मेशानंद(2011)) । मातृत्व प्रकृति द्वारा नारी को दिया गया एक अनुपम और अद्वितीय उपहार है, जो उसे सृजेता का अधिकार प्रदान करता है और उसे पुरुष से भिन्न एवं श्रेष्ठ बनाता है । किन्तु कुछ लोगों की संकीर्ण सोच पुरुष वर्चस्व की स्थापना के लिए मातृत्व का नारी के सम्मान में बाधा उत्पन्न करने हेतु दुरुपयोग करती रही है । पुरुषवादी समाज में नारी की भूमिका को मातृत्व के बहाने घर और परिवार तक सीमित करने का कुटिल प्रयास होता रहा है (अखण्ड ज्योति(2021)) । श्री माँ की नारी संबंधी अवधारणा और आधुनिक हिंदी कथा साहित्य में उसके प्रतिफलन पर शोध कार्य किया है (रॉय(2011)), जिसमें नारी के विभिन्न रूपों की को दर्शाया गया है।

3. आर्ष ग्रंथों में भी मातृत्व के व्यापक स्वरुप की अवधारणा:

3.1 वेदों में मातृत्व स्वरुप

यत्ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं यास्त ऊर्जस्तन्वः संबभूवुः । तासु नो धेह्यभि नः पवस्व माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः पर्जन्यः पिता स उ नः पिपर्तु ॥ १२ ॥

अथर्ववेद में यह प्रार्थना धरती माँ से की गई है कि वे उपासकों को अपने मध्य भाग और केन्द्रस्थल से उत्पन्न होने वाले ऊर्जा से भरपूर अन्न और अन्य पदार्थों में सम्मिलित करें । वे उन जीवनदायी पदार्थों से संपन्न हों और वे उन्हें निरंतर अन्न- जल जैसे भौतिक साधनों से पोषित करती रहें । इस सूक्त में पृथ्वी को जननी(माँ) कहा गया है और स्वयं को उसका पुत्र । अंत में यह कामना की गई है कि जैसे वर्षा(पर्जन्य) जीवन का पालन- पोषण करती है, वैसे ही पृथ्वी माता भी उन्हें निरंतर पोषण प्रदान करे । पृथ्वी माता को पोषण और जीवन के संरक्षण का प्रतीक माना गया है जो मातृत्व के स्वरुप को दर्शाता है (त्रिवेदी, 2002, अथर्ववेद 12/1/12)।

बळित्था पर्वतानां खिद्रं बिभर्षि पृथिवि । प्र या भूमिं प्रवत्वति मह्ना जिनोषि महिनि ॥ १ ॥

माता को पृथिवी के समान कहा गया है, जैसे पृथ्वी अपने पर्वतों, मेघों और नदियों के सहारे सब प्राणियों का पालन करती है और अन्न- जल उपजाकर सबको जीवन देती है, वैसे ही माता भी अपने परिवार और समाज का पालन- पोषण करने वाली, विशाल हृदय और उदार होती है ((Vedic Scriptures, n.d, ऋग्वेद 5/84/1))।

स्तोमासस्त्वा विचारिणि प्रति ष्टोभन्त्यक्तुभिः । प्र या वाजं न हेषन्तं पेरुमस्यस्यर्जुनि ॥ २ ॥

यहाँ माता को पति के सहचर्य में प्रेरक शक्ति कहा गया है । वह पति को सही मार्ग पर ले जाने वाली, उसके यश और अभ्युदय की कारणभूत होती है । माता(या पत्नी) अपने सद्व्यवहार, पवित्र आचरण और प्रकाशमय गुणों से परिवार और समाज को संभालती है ऋग्वेद (Vedic Scriptures, n.d, 5/ 84/2)।

दृळ्हा चिद्या वनस्पतीन्क्ष्मया दर्धर्ष्योजसा । यत्ते अभ्रस्य विद्युतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः ॥ ३ ॥

माता को भूमिवत् राजशक्ति कहा गया है । जैसे पृथ्वी दृढ़ता से बड़े वृक्षों को थामे रहती है और वर्षा के द्वारा सबको पोषण देती है, वैसे ही माता भी शक्ति और धैर्य के साथ सबको सहारा देती है, आश्रय बनती है और अपने आचरण से सुख और समृद्धि की वर्षा करती है (Vedic Scriptures, n.d, ऋग्वेद(5/84/3))।

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्र चोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् । आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम् । मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ॥

यहाँ माता को वेदमाता कहा गया है। वेद रूपी माता प्रेरणा देने वाली, पवित्र करने वाली और वरदायिनी है। वह मनुष्य को दीर्घायु, प्राणशक्ति, उत्तम संतान, पशुधन, यश, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करती है। परन्तु हमें इन सब वरदानों को ईश्वर का प्रसाद मानकर अहंकार न करके, इन्हें ईश्वर को अर्पित किया जाए। ऐसा करने पर ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है (Vedic Scriptures, अथर्ववेद(19/71/1))।

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ। अधा ते सुम्नमीमहे ॥

परमेश्वर की प्रार्थना का उपदेश यह है कि ईश्वर ही समस्त प्राणियों के लिए माता और पिता के समान हैं। जैसे माता स्नेह और करुणा से पालन करती है और पिता संरक्षण तथा मार्गदर्शन देता है, वैसे ही परमेश्वर संपूर्ण जगत का पालन- पोषण करता है। वह ही सबका रक्षक, सृजनकर्ता और आधार है (Vedic Scriptures, अथर्ववेद (20/108/2))।

वैदिक परंपरा में मातृत्व की अवधारणा व्यापक है, जिसमें माँ को धरती, वेद और परमेश्वर को भी माँ के रूप में देखा गया है।

3.2 उपनिषदों में मातृत्व

तैत्तिरीय उपनिषद् के शिक्षावल्ली के ग्यारहवें अनुवाक में माता को मातृदेवो भव। कह कर संबोधित किया गया है जिसका अर्थ है माता को देवता रूप में जानना चाहिए (राजाराम, 1923)।

मातृभाव को चेतनशक्ति के रूप में भी दर्शाया गया है जिसे उपनिषदों में पराशक्ति कहा गया है, जिसे सम्पूर्ण सृष्टि का मूल कारण माना गया है। बह्वचोपनिषद् के अनुसार, इसी पराशक्ति से ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र प्रकट हुए, और इसी से मरुद्गण, गन्धर्व, अप्सराएँ तथा बाजा बजाने वाले किन्नर उत्पन्न हुए। केवल देवगण ही नहीं, बल्कि संसार के सभी भोग्य पदार्थ और प्राणी-जगत का मूल भी यही शक्ति है। अण्डज (अण्डे से उत्पन्न), स्वेदज (पसीने से उत्पन्न), उद्भिज्ज (भूमि से उत्पन्न) और जरायुज (गर्भ से उत्पन्न) सहित जो भी स्थावर (स्थिर) और जङ्गम (चलने वाले) जीव हैं, मनुष्य समेत,वे सब उसी पराशक्ति की अभिव्यक्ति हैं (पोधार, 2023, पृ. 53)।

संपूर्ण ब्रह्मांड का आधार एक ही शुद्ध चेतन तत्त्व है। इसी एक तत्त्व को जब अलग-अलग दृष्टिकोण से देखा जाता है, तो इसके नाम और रूप भी बदल जाते हैं। जब इसकी कल्पना या उपासना एक पुरुष रूप में की जाती है, तो इसे ईश्वर, शिव या भगवान कहा जाता है, और जब इसकी कल्पना एक स्त्री रूप में की जाती है, तो इसे ईश्वरी, दुर्गा या भगवती कहा जाता है। इस प्रकार, शिव-गौरी, कृष्ण-राधा, और राम-सीता जैसे सभी देवी-देवता एक ही परम सत्ता के अभिन्न रूप हैं। उनके बीच कोई वास्तविक भेद नहीं है; यह भिन्नता केवल उपासकों की अपनी-अपनी श्रद्धा और दृष्टि के कारण ही होती है (पोधार, 2023, पृ. 42)।

ब्रह्म की शक्ति (पराशक्ति) का स्वरूप और सृष्टि में उसका महत्त्व

ब्रह्म की शक्ति को शास्त्रों में पराशक्ति कहा गया है, जो सम्पूर्ण सृष्टि का आधार मानी जाती है। तांत्रिक मत में इसे विज्ञानानन्दघन ब्रह्म कहा गया है, और वेद, उपनिषद्, शास्त्र तथा पुराणों में इसका वर्णन देवी, ईश्वरी और मूलप्रकृति जैसे अनेक नामों से हुआ है। यह पराशक्ति कभी निर्गुण तो कभी सगुण रूप में प्रकट होती है, और सगुण रूप को भी निराकार तथा साकार, दोनों प्रकार से अनुभव किया जाता है। विज्ञानानन्दघन ब्रह्म का स्वरूप अत्यंत गूढ़ और सूक्ष्म है, इसलिए शास्त्रों ने उसे समझाने के लिए अनेक प्रकार की उपमाएँ दी हैं। शक्ति की उपासना अंततः साधक को परमात्मा तक ही ले जाती है, चाहे वह उपासना किसी भी नाम या रूप, देव, देवी, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति, राम या कृष्ण में क्यों न की जाए। यही शक्ति जीवों पर करुणा करके सगुण रूप धारण करती है और ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश के रूप में सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार करती है। वास्तव में यह शक्ति निर्गुण है, किन्तु अपनी इच्छा से त्रिगुणात्मिका बनकर कार्य करती है। शास्त्रों ने इसे विश्वजननी, मूलप्रकृति, सर्वेश्वरी, सर्वाधार, सर्वमंगलमयी, सर्वज्ञ और परात्पर कहा है, जो स्वयं नित्य, सनातनी और परमतेजस्वरूपा हैं (पोधार, 2023, पृ. 53)

3.3 पुराणों में मातृत्व का स्वरुप

3.3.1 देवीभागवत पुराण

स्वेच्छामयः स्वेच्छया च द्विधारूपो बभूव ह । स्त्रीरूपो वामभागांशो दक्षिणांशः पुमान्स्मृतः ॥ २७ ॥

परमात्मा ने सृष्टि सृजन की ईच्छा की, उसने अपनी सत्ता को दक्षिण व् वाम दो भागों में विभक्त कर दिया। दक्षिण भाग पुरुष कहलाया, वाम भाग नारी कहलाया।हिन्दू संस्कृति इस आधार पर नारी को परमेश्वर मान कर चलता है (गीता प्रेस, 2020, 9/2/27)।

देवीभागवत पुराण के 'देवी स्त्रोत के 15-22 श्लोक' में यह वर्णित है कि भगवान ब्रह्मा, विष्णु और महेश देवी की अर्चना करते हैं। अर्चना करते समय वे देखते हैं कि देवी के पाँव के नख में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड समाया हुआ है, जो एक दर्पण के समान है। इस नख में विष्णु, शंकर, वायु, अग्नि, यम, सूर्य, वरुण, कुबेर, इन्द्र, पर्वत, समुद्र, नदियाँ, गन्धर्व, अप्सराएँ, अष्टवसु, साध्यगण, सिद्धगण, पितरगण, शेष आदि सम्पूर्ण नाग, किन्नर, उरग और राक्षस विद्यमान थे। उसी नखरूपी दर्पण में वैकुण्ठ, ब्रह्मलोक और पर्वतों में श्रेष्ठ कैलाश भी विद्यमान थे। विष्णु जी ने यह भी बताया कि उस नख में वह कमल भी था जिसने उन्हें उत्पन्न किया था, साथ ही शेषशायी भगवान विष्णु और मधु-कैटभ नामक दैत्य भी थे। इस दर्शन के बाद, तीनों भगवान यह समझ गए कि ये भगवती सम्पूर्ण विश्व की माता हैं (शर्मा, 1996, पृ. 135-136)।

जगत संचालन में देवी का कार्य

हे भगवती, आप अपने ही प्रभाव से सम्पूर्ण संसार का पालन पोषण करती हैं और अपने दिव्य तेज से ही सबको प्रकट करती हैं। प्रलय काल में आप ही सबको अपने में विलीन कर लेती हैं (शर्मा, 1996, पृ. 137-138)।। विष्णु जी कहते हैं कि वह सम्पूर्ण जगत की ज्ञाता हैं, और सब कुछ उनके संकेत से ही संभव है। यह सर्वविदित है कि ब्रह्मा स्रष्टा हैं, विष्णु पालनकर्ता हैं और शिव संहारकर्ता हैं, किन्तु सत्य यह है कि वे तीनों देवी की इच्छा से ही सशक्त होकर कार्य कर पाते हैं (शर्मा, 1996, पृ. 137-138)।। देवी ही विश्व का पालन करती हैं, और उनकी शक्ति से ही विश्व स्थिर है। उनकी शक्ति से ही सूर्य प्रकाशित है, और वे ही अपनी शक्ति से पुरे विश्व को प्रकाशित करती हैं। यथार्थ में देवी ही नित्य और प्रकृति हैं। विष्णु जी यह भी कामना करते हैं कि उनका और देवी का सम्बन्ध सदैव ही माता-पुत्र का बना रहे (शर्मा, 1996, पृ. 140)।

3.3.2 बृहद्धर्मपुराण

बृहद्धार्म्पुरण पूर्वखंड में मातृ स्वरुप की विस्तृत व्याख्या देखने को मिलती है -
पितुरप्यधिका माता गर्भधोरणपोषणात्। अतो हि त्रिषु लोकेषु नास्ति मातृसमो गुरुः ।॥३३॥
नास्ति शम्भुसमः पूज्यो नास्ति मातृसमो गुरुः ॥३४॥
नास्ति मातृसमो गुरुः॥३५॥
नास्ति भार्य्यासमं मित्रं नास्ति पुत्रसमः प्रियः। नास्ति भग्नीसमा मान्या नास्ति मातृसमो गुरुः ॥३६॥ मातृसमो गुरुः ॥३७॥

गर्भधारण-पोषण माता करती हैं। वे पिता की अपेक्षा श्रेष्ठ गुरु हैं। अतः तीनों लोक में माता के समान कोई गुरु नहीं है। भार्या ऐसा मित्र कोई नहीं है। पुत्र ऐसा कोई प्रिय नहीं है। बड़ी बहन ऐसा मान्य कोई नहीं है। तथा माता के समान कोई गुरु नहीं है। गुरुगण में माता श्रेष्ठ है (कृष्ण द्वैपायन, 2014, बृहद्धर्मपुराण 2/33–38, पृ. 10)।

मातरं पितरञ्चोभौ दृष्ट्वा पुत्रस्तु धर्मवित्। प्रणम्य मातरं पश्चात् प्रणमेत् पितरं गुरुम् ॥४०॥
माता धरित्री जननी दयार्द्रहृदया शिवा। देवी भूरवनिः श्रेष्ठा निर्दोषा सर्वदुःखहा ॥४१॥
आराधनीया परमा दया शान्तिः क्षमा धृतिः । स्वाहा स्वधा च गौरी च पद्मा च विजया जया ॥४२॥ दुःखहन्त्रीति नामानि मातुरेवैकविंशतिम्। शृणुयाच्छ्रावयेन्मत्र्यः सर्वदुःखाद् विमुच्यते ॥४३॥

माता ही पुरुष के पूर्वभावों की आश्रयभूता होने के कारण सर्वोत्तम गुरु है। जब पुत्र माता-पिता को साथ देखें, तब पहले माता को प्रणाम करके तब पिता को प्रणाम करें। माता ही धरती, जननी, दयार्द्रहृदया, शिवा, देवी, त्रिभुवन में श्रेष्ठरूपा, निर्दोष, सर्वदुःखनाशिनी, परमाराध्या, दया, शान्ति, क्षमा, धृति, स्वाहा, स्वधा, गौरी, पद्मा, विजया तथा दुःखहन्त्री हैं। ये उनके २१ नाम हैं। इन २१ नाम को सुनने से मनुष्य, सर्व दुःख से मुक्त हो जाता है (कृष्ण द्वैपायन, 2014, बृहद्धर्मपुराण 2/39–43, पृ. 11)।

पुराणों में सर्वत्र "देवी" अथवा "शक्ति" की महिमा बताई गई है, और उन्हें जगत की संचालिका तथा आदि शक्ति कहा गया है। 'देवी' अथवा 'शक्ति' का अर्थ उस सत्ता से है जिसे समग्र सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और लय का मूल माना गया है। जगत

की उत्पत्ति का मूल कारण इसी शक्ति तत्व को साकार ब्रह्म के स्वरूप के रूप में भी माना जाता है (शर्मा, 1996, पृ. 6)। भगवान विष्णु ने उनकी स्तुति करते हुए उन्हें प्रकृति देवी, विद्धात्री देवी, कल्याणी, कामदा, वृद्धि तथा सिद्धि रूपिणी भगवती, सच्चिदानंद स्वरूपिणी, विश्व योनि रूपा देवी, और सर्व-अधिष्ठान रूपा देवी कहकर नमस्कार किया है। भगवान विष्णु यह स्वीकार करते हैं कि माता, आप ही सम्पूर्ण संसार में प्रतिष्ठित हैं, और आप ही इस सृष्टि की उत्पत्ति और संहारिणी हैं। आप ही लोकशक्तिमयी हैं, और सम्पूर्ण संसार में आपके सिवा कुछ भी नहीं है (शर्मा, 1996, पृ. 137-138))।

3.4 श्रीदुर्गा सप्तसती में मातृत्व के देवी स्वरुप

श्रीदुर्गा सप्तसती में मातृत्व के देवी स्वरुप का उल्लेख ग्यारहवें अध्याय में भी देखने को मिलता है,

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु। त्वयैकया पूरितमम्बयैतत् का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः॥6॥

हे देवी ! समस्त संसार की सब विद्याएं तुम्हीं से निकली हैं। और सब स्त्रियाँ तुम्हारी ही स्वरुप हैं, समस्त विश्व तक तुमसे ही पूरित है अतः आप की स्तुति किस प्रकार की जाय (गीता प्रेस, 2006, अध्याय 11/6)।

3.5 श्री रामचरित मानस में मातृत्व का स्वरुप

जनक सुता जग जननि जानकी ।अतिसय प्रिय करुणा निधान की ।।ताके जुग पद कमल मनावऊँ ।जासु कृपा निर्मल मति पावऊँ ।।

मैं जनकनंदिनी, जगतजननी और करुणा की साक्षात मूर्ति श्री जानकी जी के पावन चरणों में श्रद्धा अर्पित करता हूँ। उनका ध्यान करता हूँ, जिनकी कृपा से मन शुद्ध और बुद्धि निर्मल होती है। संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी ने माता सीता की स्तुति एक ऐसी दिव्य मातृशक्ति के रूप में की है, जो सद्बुद्धि प्रदान करती हैं (त्रिपाठी, 2004, बालकाण्ड, प्रथम सोपान, चौपाई 17.4, पृ. 73)।

3.6 महाभारत में में मातृत्व का स्वरुप

जननी जन्म काले च स्नेह काले च कन्यका। भार्या भोगाय सम्पृक्ता अन्तकाले च कालिका
एकैव कालिका देवी बिहरन्ती जगत्त्रये॥

महाभारत में यह उल्लेख मिलता है कि महामाया, जो जगतजननी के रूप में समस्त प्राणियों की रक्षार्थ प्रकट होती हैं, जीवन के विभिन्न चरणों में विविध रूपों में हमारे साथ रहती हैं। जन्म के समय वह जननी बनकर जीवन का प्रारंभ करती हैं, बाल्यकाल में कन्या के रूप में स्नेह और अपनत्व प्रदान करती हैं, युवावस्था में पत्नी बनकर भोग और उत्तरदायित्वों का निर्वहन करती हैं, और जीवन के अंतिम चरण में कालिका के रूप में रक्षण करती हैं। इस प्रकार एक ही महादेवी त्रिकाल और त्रिलोक में सतत विचरण करती हुई जीवन की सम्पूर्ण यात्रा में साथ निभाती हैं (शर्मा, 1998, पृ. 2.11)। हम उस

महाशक्तिशाली नारी की स्तुति करते हैं, जो समस्त जीवों की जन्मदात्री हैं, और जिनसे चारों दिशाओं में प्रतिष्ठा, यश और ऊर्जा का प्रसार होता है (शर्मा, 1998, पृ. 2.10)।

ग्रंथ/शास्त्र	मातृत्व का स्वरूप और मुख्य अवधारणा	प्रमुख बिंदु
वेद (अथर्ववेद, ऋग्वेद)	पृथ्वी, वेदमाता और परमेश्वर के रूप में मातृत्व	* पृथ्वी: जननी (माँ), पोषण, जीवन का संरक्षण, धैर्य, सबको सहारा देने वाली राजशक्ति। (अथर्ववेद 12/1/12) * माता (पृथिवी के समान): पालन-पोषण करने वाली, विशाल हृदय, उदार, पति की प्रेरक शक्ति, परिवार और समाज को संभालने वाली। (ऋग्वेद 5/84/1-3) * वेदमाता: प्रेरणा देने वाली, पवित्र करने वाली, वरदायिनी (आयु, प्राणशक्ति, संतान, यश, धन देने वाली)। (अथर्ववेद 19/71/1) * परमेश्वर: समस्त प्राणियों के लिए माता और पिता के समान, स्नेह, करुणा, संरक्षण और मार्गदर्शन देने वाला। (अथर्ववेद 20/108/2)
उपनिषद् (तैत्तिरीय, बह्वचोपनिषद्)	देवता रूप, पराशक्ति (शुद्ध चेतन तत्त्व) के रूप में मातृत्व	* मातृदेवो भवः: माता को देवता के रूप में जानना चाहिए। (तैत्तिरीय उपनिषद्) * पराशक्ति/ईश्वरी: सम्पूर्ण सृष्टि का मूल कारण, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र सहित समस्त जगत (भोग्य पदार्थ, प्राणी-जगत) की जननी और आधार। (बह्वचोपनिषद्) * ईश्वरी/दुर्गा/भगवती परम सत्ता (ब्रह्म) का स्त्री रूप है; यह भिन्नता केवल उपासकों की श्रद्धा के कारण है।
		* देवीभागवत: परमात्मा का वाम भाग (स्त्री रूप) जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की माता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश देवी की इच्छा से ही कार्य करते हैं। देवी ही सृष्टि की उत्पत्ति, पालन और संहार करती हैं। विष्णु जी का कामना- माता-पुत्र का संबंध। (9/2/27, देवी स्त्रोत)

ग्रंथ/शास्त्र	मातृत्व का स्वरूप और मुख्य अवधारणा	प्रमुख बिंदु
वेद (अथर्ववेद, ऋग्वेद)	पृथ्वी, वेदमाता और परमेश्वर के रूप में मातृत्व	* पृथ्वी: जननी (माँ), पोषण, जीवन का संरक्षण, धैर्य, सबको सहारा देने वाली राजशक्ति। (अथर्ववेद 12/1/12) * माता (पृथिवी के समान): पालन-पोषण करने वाली, विशाल हृदय, उदार, पति की प्रेरक शक्ति, परिवार और समाज को संभालने वाली। (ऋग्वेद 5/84/1-3) * वेदमाता: प्रेरणा देने वाली, पवित्र करने वाली, वरदायिनी (आयु, प्राणशक्ति, संतान, यश, धन देने वाली)। (अथर्ववेद 19/71/1) * परमेश्वर: समस्त प्राणियों के लिए माता और पिता के समान, स्नेह, करुणा, संरक्षण और मार्गदर्शन देने वाला। (अथर्ववेद 20/108/2)
पुराण (देवीभागवत, बृहद्धर्मपुराण)	विश्वजननी, आदि शक्ति और सर्वोत्तम गुरु के रूप में मातृत्व	* बृहद्धर्मपुराण: पिता से भी श्रेष्ठ गुरु (गर्भधारण-पोषण के कारण)। तीनों लोक में माता के समान कोई गुरु नहीं है। (2/33-35)
		* माता के 21 नाम: धरती, जननी, दयार्द्रहृदया, शिवा, देवी, निर्दोष, सर्वदुःखहा, शान्ति, क्षमा आदि। (2/41-43)
श्रीदुर्गा सप्तसती	समस्त विद्याओं और स्त्रियों के मूल स्वरूप के रूप में मातृत्व	* समस्त संसार की सब विद्याएं देवी के ही भेद हैं। * जगत् की सब स्त्रियाँ देवी का ही स्वरूप हैं। (11/6)
श्रीरामचरितमानस	जगतजननी और सद्बुद्धि प्रदायिनी के रूप में मातृत्व	* जनकसुता जग जननि जानकी: माता सीता जगतजननी हैं। * उनकी कृपा से मन शुद्ध और बुद्धि निर्मल होती है। (बालकाण्ड, चौपाई 17.4)
महाभारत	जीवन के सभी चरणों में रक्षक (महामाया/कालिका) के रूप में मातृत्व	* महामाया/कालिका जीवन के विभिन्न चरणों में रहती हैं: जन्म के समय जननी, बाल्यकाल में कन्या (स्नेह),

ग्रंथ/शास्त्र	मातृत्व का स्वरूप और मुख्य अवधारणा	प्रमुख बिंदु
वेद (अथर्ववेद, ऋग्वेद)	पृथ्वी, वेदमाता और परमेश्वर के रूप में मातृत्व	* पृथ्वी: जननी (माँ), पोषण, जीवन का संरक्षण, धैर्य, सबको सहारा देने वाली राजशक्ति। (अथर्ववेद 12/1/12) * माता (पृथिवी के समान): पालन-पोषण करने वाली, विशाल हृदय, उदार, पति की प्रेरक शक्ति, परिवार और समाज को संभालने वाली। (ऋग्वेद 5/84/1-3) * वेदमाता: प्रेरणा देने वाली, पवित्र करने वाली, वरदायिनी (आयु, प्राणशक्ति, संतान, यश, धन देने वाली)। (अथर्ववेद 19/71/1) * परमेश्वर: समस्त प्राणियों के लिए माता और पिता के समान, स्नेह, करुणा, संरक्षण और मार्गदर्शन देने वाला। (अथर्ववेद 20/108/2) युवावस्था में पत्नी (भोग), अंत में कालिका (रक्षण)। (2.11) * समस्त जीवों की जन्मदात्री और प्रतिष्ठा, यश व ऊर्जा का प्रसार करने वाली महाशक्तिशाली नारी।

तालिका 1.प्राचीन भारतीय ग्रंथों में मातृत्व का स्वरूप और अवधारणा

4. उपसंहार

आर्षग्रंथों में मातृत्व की अवधारणा केवल एक जैविक प्रक्रिया तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। यह विवेचनात्मक अध्ययन दर्शाता है कि भारतीय संस्कृति में मातृत्व को करुणा, सृजनशीलता और परम सत्ता के स्वरूप के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है, जिसकी उपेक्षा वर्तमान युग के मूल्य-संकट, आस्था-संकट और सामाजिक विघटन जैसी समस्याओं का मूल कारण है।

वेद माता को देवतुल्य स्थान देते हुए पृथ्वी, वेदमाता और परमेश्वर के रूप में देखते हैं। माता को पोषण, संरक्षण, प्रेरक शक्ति और राजशक्ति के समान धैर्यवान बताया गया है।

उपनिषद 'मातृ देवो भव' के द्वारा माता को प्रथम गुरु मानते हैं और मातृभाव को पराशक्ति के रूप में सम्पूर्ण सृष्टि का मूल कारण मानते हैं। पुराण मातृशक्ति को आदिशक्ति, विश्वजननी, मूलप्रकृति और सर्वेश्वरी कहते हैं, जो ब्रह्मा, विष्णु और महेश

को भी शक्ति प्रदान करती हैं। बृहद्धर्म पुराण में माता को पिता से भी श्रेष्ठ गुरु बताया गया है, जिनकी कृपा से सांसारिक और आध्यात्मिक कल्याण संभव है।

महाकाव्य की मातृ-पात्राएँ त्याग और संघर्ष का आदर्श प्रस्तुत करती हैं , जैसे गोस्वामी तुलसीदास जी ने माता सीता की स्तुति जगतजननी और सद्बुद्धि प्रदान करने वाली दिव्य मातृशक्ति के रूप में की है।

निष्कर्षतः, स्पष्ट होता है कि मातृत्व केवल संतान-जनन की जैविक प्रक्रिया नहीं, बल्कि करुणा, सृजनशीलता, आत्मसमर्पण और आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग है। आर्षग्रंथों की शिक्षाएँ यह संकेत देती हैं कि यदि समाज में मातृत्व की गरिमा को पुनःस्थापित किया जाए, तो मूल्य-संकट, आस्था-संकट और सामाजिक विघटन जैसी समस्याओं का समाधान संभव है। यह अवधारणा केवल व्यक्तिगत जीवन की उन्नति का मार्ग ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आध्यात्मिक उन्नति का भी मार्गदर्शन करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ब्रह्मेशानंद. (2011). मातृदर्शन (प्रथम संस्करण). रामकृष्ण मठ, नागपुर, पृ.10
2. गीता प्रेस. (2006). श्री दुर्गा सप्तशती (अध्याय 11/6, 55वाँ पुनः संस्करण, सम्वत् 2063). गोरखपुर: गीता प्रेस।
3. गीता प्रेस. (2020). देवीभागवत पुराण (अध्याय 9, श्लोक 2/27, 14वाँ संस्करण). गोरखपुर: गीता प्रेस।
4. कृष्ण द्वैपायन. (2014). बृहद्धर्मपुराण (एस. एन. खंडेलवाल, भाष्यक; चौखम्बा संस्कृत सीरीज). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज कार्यालय। Internet Archive. पुनः प्राप्त किया गया 24 सितंबर, 2025, से Brihad Dharma Puran Of Krishna Dvaipayan Annotated By S N Khandelaval, Choukhamba Sanskrit Series Choukhamba Sanskrit Series Office, Varanasi : Choukhamba Sanskrit Series Office, Varanasi : Free Download, Borrow, and Streaming : Internet Archive
5. पोधार, ह. (सम्पा.). (2023). कल्याण: शक्ति अंक विशेषांक (पृ. 40). गीता प्रेस।
6. पोधार, ह. (सम्पा.). (2023). कल्याण: शक्ति अंक विशेषांक (पृ. 53). गीता प्रेस।
7. पंड्या, प्र.(संपादक). मातृ दिवस का सच्चा अर्थ, अखण्ड ज्योति, वर्ष 2021, पृ.11
8. रवींद्र .(2003). श्वेतकमल (तृतीय संस्करण). श्रीअरविंद सोसाइटी पांडिचेरी -2, पृ.222
9. राजाराम. (1923). तैत्तिरीय उपनिषद. https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.343171/page/n27/mode/2up
10. शर्मा, श्. (सम्पा०). (1996). देवी भागवत पुराण (भाग 1, पृ. 6). संस्कृति संस्थान.
11. शर्मा, श्. (सम्पा०). (1996). देवी भागवत पुराण (भाग 1, पृ. 137-138). संस्कृति संस्थान.
12. शर्मा, श्. (सम्पा०). (1996). देवी भागवत पुराण (भाग 1, पृ. 135-136). संस्कृति संस्थान.
13. शर्मा, श्. (सम्पा०). (1996). देवी भागवत पुराण (भाग 1, पृ. 140). संस्कृति संस्थान.

14. शर्मा, श्. (1998). वाङ्मय: इक्कीसवीं सदी - नारी सदी (द्वितीय संस्करण). अखण्ड ज्योति संस्थान।
15. त्रिपाठी, श्. विजयनन्दजी (तीकाकार). (2004). श्री रामचरितमानस: विज्या टीका (बालकाण्ड, प्रथम सोपान, चौपाई 17.4, पृ. 73; पुनर्मुद्रित संस्करण). चौखम्बा विद्याभवन।
16. त्रिवेदी, क्ष.क. (2002, जुलाई). अथर्ववेद (आर्यभाषा-भाष्य), अष्टम कांड से बीस कांड तक [भाष्य] (श्लोक 12/1/12). सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।
17. Vedic Scriptures. (n.d.). ऋग्वेद 5.84.1. https://vedicscriptures.in/
18. Vedic Scriptures. (n.d.). ऋग्वेद 5.84.2. https://vedicscriptures.in/
19. Vedic Scriptures. (n.d.). ऋग्वेद 5.84.3. https://vedicscriptures.in/
20. Vedic Scriptures. (n.d.). अथर्ववेद भाष्यं हरिशरण सिद्धांतालंकरम: अथर्ववेद (19/71/1). https://vedicscriptures.in/
21. Vedic Scriptures. (n.d.). अथर्ववेद भाष्यं पंडित क्षेमकरंदास चतुर्वेदी: अथर्ववेद (20/108/2). https://vedicscriptures.in/